Knowledge Consortium of Gujarat
Department of Higher Education - Government of Gujarat
Journal of Social Science - ISSN : 2279-0241

Continuous Issue-32| July – September 2018

" वेदों में राष्ट्र की राजनैतिक स्थिति – वर्तमान परिप्रेक्ष्य में "

'वेद' शब्द विद् धातु से ज्ञान, सत्ता, लाभ और विचारणा अर्थ में धञ् प्रत्येय करने पर निष्पन्न होता है। जिसका मुख्य अर्थ है 'ज्ञापक'। दयानन्द सरस्वतीजी ऋग्वेदभाष्य भूमिका में लिखते है " विदन्ति जानन्ति, विद्यन्ते भवन्ति, विन्दन्ति लभन्ते, विदन्ते विचारयन्ति, सर्वे मनुष्याः सर्वाः सत्यविद्या यैर्येषु वा तथा विद्वांसश्च भवन्ति ते वेदाः।" वेद सार्वजनीन और सार्वभोम हैं।वेद मानव- चिन्तनधारा के अक्षय कोष हैं जिनमें मानव जीवन के विविध पहलुओं के दर्शन होते है जिनसे यह स्पष्ट है कि हमारे मन्त्रदृष्टा ऋषिगण राष्ट्रिय भावना के प्रति पूर्णतया सजाग रहे हैं। वैदिक राष्ट्र सर्वजन हिताय और सर्वजन सुखाय की भावना से ओत-प्रोत है। प्रस्तुत शोधपत्र में वेदों में निरूपित राजनैतित स्थिति को वर्तमान परिप्रेक्ष्य में प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

राष्ट्र क्या है ? राष्ट्र का स्वरूप भूमि, जन और उसकी संस्कृति मिलकर बनता है। इस भूमण्डलीकरण के युग में राजनीति का विशेष महत्त्व है। प्रत्येक राष्ट्र अपने आर्थिक और राजनितिक मूल्यों के आधार पर परस्पर के संबंधो को सजाने -सवाँरने में अपने राजनीतिक चिन्तन को विकसित कर रहा है। विश्व के सबसे बडे लोकतंत्र एवं गण राज्य के रूप में प्रसिद्धि भारत वर्ष को ऐसे परिवेश में अपने चिन्तन के लिए सर्वाधिक प्रचीन एवं समृद्धिशाली संस्कृत वाङ्मय विरासत के रूप में प्राप्त है।वैदिक काल से लेकर अद्यतन गंगा के निर्मल, अविरल जल प्रवाह की तरह राजनीतिक चिन्तन की परम्परा भारत तो क्या विश्व स्तर पर व्याप्त एवं ग्राह्य है। स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात् 26 जनवरी 1950 को नियमों की नियामत बनकर प्राप्त भारत का संविधान राष्ट्र रूपी मंदिर में प्राणतत्व के रूप में अधिष्ठित है, जिससे नियमित हुआ भारतीय जनमानस अपने सुख- समृद्धि-सम्पन्न जीनव की तलाश में अग्रसर है।

वेदों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि वैदिक काल में राजनीतिक अवस्था समुन्नत थी। उस समय राजा का निर्वाचन राजा के कर्तव्यों का निर्धारण, मंत्रिमण्डल का गठन, सभा-समितियों के कार्यो का निर्देशन, अर्थ-व्यवस्था, कर-निर्धारण, विविध शस्त्रास्त्रों का उल्लेख समुन्नति का परिचायक है। जैसे कि वेदों में - राष्ट्र और देश - अथर्ववेद 8.10 में आता है कि सृष्टि में पहले विराज की स्थिति थी, अर्थात् कोई राजा न था। धीरे धीरे वह विराज, गार्हपत्य, आहवनीय दक्षिणाग्नि,सभा, समिति और आमन्त्रण की अवस्था को प्राप्त हुआ। वेदों में **'राष्ट्र' और 'देश'** शब्दों का प्रयोग मिलता है। त्वं राष्ट्राणि रक्षसि। (अथर्व. 19-30-3) देशोपसर्गाःशमु नो भवन्तु । (अथर्व 19-9-3) इस मंत्र मे देश पर आने वाले संकटों या दैवी प्रकोप से देश की रक्षा की प्रार्थना की गयी है।
यजुर्वेद में आदर्श राष्ट्र के तीन गुणो का उल्लेख है-[1]

(1) स्वराजस्थ (राष्ट्र स्वतंत्र हो)।

(2) दनभृतस्थ (वह दनहितकारी हो)।

(3) विश्वभृतस्थ (वह विश्व- कल्याण के लिए प्रयत्नशील हो)।

अथर्ववेद में ऐसा वर्णन मिलता है कि राष्ट्र की उन्नति के लिए दो गुणों का होना अनिवार्य है, तप (अनुशासन, Discipline) , दीक्षा (समर्पण, Dedication) जैसे-

भद्रमिच्छन्त ऋषयः स्वर्विदस्तपो दीक्षामुप निषेदुरग्रे ।
ततो राष्ट्रं बलमोजश्च जातं तस्मै देवा उपसंनमन्तु ।।[1]

ग्राम, विश् और जन - प्राचिन राजनीतिक व्यवस्था की सबसे छोटी इकाई ग्राम थी । ग्राम प्रधान या ग्राम प्रमुख को 'ग्रामीण' कहा जाता था । इसका विधिवत् निर्वाचन होता था। ग्रामीण को राजा के निर्वाचन में भाग लेने का अधिकार प्राप्त था अतः वह राजकृत कहा गया है।

ये राजानो राजकृतः सूता ग्रामण्यश्य ये ।[2]

ग्राम सम्बन्धी सभी भूमि विवादों को निस्तारीत करना उसका कार्य होता था। यजुर्वेद में 'सेनानी ग्रामण्यौ' में सेनापति के साथ उसका भी उल्लेख है। इससे स्पष्ट होता है कि वह सेना के लिए सैनिकों को तैयार करता था ।

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में भी आज ग्राम पंचायत और सरपंच का कार्य भूमि विवाद सुलजाना, प्राथमिक सवलते देना है।

अनेक ग्रामों के समुह को 'विश्' कहते थे। इस के सर्वोच्च अधिकारी को 'विश्पति' कहते थे। ऋग्वेद में विश्पति को पुरो का पालक और पिता कहा गया है। सबसे ज्ञात होता है कि वह नगराध्यक्ष के तुल्य होता था ।

विशों के समूह को जन कहते थे । इनका सर्वोच्च शासक राजा होता था । जनो का निवास जनपदों में होता था ऋग्वेद और अथर्ववेद में ऐसे 20 राज्यों का उल्लेख है। अनेक जनपदों को मिलाकर 'राष्ट्र' बनता है।

राजा का निर्वाचन - ऋग्वेद और अथर्ववेद के अनेक सूकितयों में प्रजा के द्वारा राजा के निर्वाचन का वर्णन उपलब्ध है।

त्वां विशो वृणतां राज्याय त्वामिमाः प्रदिशः पञ्च देवीः।
वर्ष्मन् राष्ट्रस्य ककुदि श्रयस्व ततो न उग्रो विभजा वसूनि ।।[3]

राजा के वरण के सम्बन्ध में अथर्ववेद के 6,87,1-2 तथा 6,88,1-2 मन्त्र बहुत महत्त्व के है।

राजा की नियुक्ति समिति करती थी। उसका निर्वाचन गुणों और वीरता आदि नें उत्कृष्टता के आधार पर सर्वसम्मति किया जाता था। इसकी निर्युक्ति जीवन पर्यन्त तक के लिए होती थी।

राज्याभिषेक और शपथ ग्रहण - राजा के विधिवत् निर्वाचन के बाद उसका अभिषेक होता था । यजुर्वेद के अध्याय 9 और 10 में तथा शतपथ ब्राहमण के काण्ड -5 में उसका विस्तृत वर्णन है। राज्याभिषेक के समय राजा को शपथ लेनी होती थी । मैं सत्यनिष्ठा के साथ शपथ लेता हूँ कि

"यां च रात्रिमजायेऽ हं यां च प्रतास्मि तदुभयमन्तरेण इष्टापूर्तं मे लोकं सुकृतमायुः प्रजां वृञ्जीथा यदि ते द्रुहयेयमिति।" [4]

'जिस रात्रि में मेरा जन्म हुआ और जिस रात्रि में मेरी मृत्यु होगी, उन दोनों के मध्यम मैंने जो इष्टापूर्त (पुण्यकर्म) किये हों, वे सब नष्ट हो जायँ और मैं स्वर्ग , समस्त शुभ कर्म, आयु और संतान से वंचित हो जाऊँ,

यदि मैं किसी भी प्रकार से देश और जनता के प्रति द्रोह करूँ।' इससे ज्ञात होता है कि देशद्रोह और जनता के साथ विश्वासघात राजा के लिए अक्षम्य अपराध था ।

वर्तमान में चुंनाव के पूर्वे हरेक पक्ष अपने अपने घोषणापत्र में प्रजालक्षी, राज्यलक्षी और राष्ट्रलक्षी कार्य करने की घोषणा करता है। प्रजा के सामने विविध प्रलोभन रखके विजयी हो जाता है।बाद मे अपने वाँदे से मुकर जाता है। आज भी मन्त्री और प्रधानमन्त्री का शपथ समारोह तो होता है, शपथ भी ग्रहण की जाती है पर उसका अमल न करने पर कोई सजा नहीं की जाती क्योंकि वर्तमान में उन्हे अक्षम्य अपराध ही नहीं माना जाता। वर्तमान के राजाधिकारियों को हमें शतपथ ब्राह्मण का यह विधान याँद कराना होगा कि राज्यपद ग्रहण करने के समय उसे यह याद रखना पडेगा कि -

इयं ते राट्- यन्तासि यमनो ध्रुवोऽसि धरुणः।
कृष्यै त्वा क्षेमाय त्वा रय्यै त्वा पोषाय त्वा।।[5]

राजा का कार्य -

राज्याभिषेक के साथ ही राजा के कर्तव्यों का भी निर्देश किया गया है। राजा से कहा गया है कि - तुमको यह राष्ट्र दिया जा रहा है, तुम इसके नियन्ता है। दृढता पूर्वक इस दायित्व को आर्थिक समुन्नति, राष्ट्र की सुदृढत।

- कृषि की उन्नति से ही अन्न समृद्धि होगी।
- जन कल्याण और प्रजा का रंजन राजा को स्थिरता प्रदान करता है।
- आर्थिक सुमन्नति से ही देश की प्रतिष्ठा बढेगी,देश की सृदृढता से राष्टीय गौरव बढेगा।
- अर्थवर्वेद का कथन है कि राष्ट्र को सुदृढ बनाओं और सौभाग्य की और ले जावों।

इदं राष्ट्रं पिपृहि सौभागाय विश्व एनमनु मदन्तु देवाः।[6]

राष्ट्र की सुदृढता से आर्थिक अभ्युदय होगा। ऋग्वेद में राजा को कठोर अनुशासन की शिक्षा दी गयी है। (ऋ. 10-128-9) यजुर्वेद में राजा को निर्देष है कि उग्रवादी को कठोर दण्ड दे, दुर्जनो से कठोर व्यवहार करे और मित्रों को प्रेम से वश करे।

उग्रं लोहितेन, मिश्रं सौव्रत्येन, रुद्रं दौर्व्रत्येन,।[7]

राजा का कर्तव्य है कि वह प्रजा में सुरक्षा की भावना उत्पन्न करे और निर्भय करे । अभियानि कृण्वन्।[8] राजा प्रजा की रक्षा करे और प्रजा का कर्तव्य है कि वह राजा को अपना पूर्ण समर्थन दें। व्यापार और शिक्षा को संरक्षण दे । व्यापारीयों और विद्वानों की रक्षा करे। रक्षां च नो मघोनः पाहि सूरीन्।[9]

प्रवर्तमान समय में शिक्षा की जो स्थिति है ,इससे हम सब वाकेफ है। आज शिक्षा का हि व्यापारीकरण हो गया है। जीस के कारण सर्वांगी विकासवाली परंपरा ही नष्ट हो गई है।

अथर्ववेद (12-1-47) में कहा गया है कि राज्य द्वारा सडकें और पुल भी बनवाई जायें।

वर्तमान में देखा जाये तो आज सडंके बनती है पर उसकी मजबूती की कोई गेरंटी नही होती। कभी कभी तो लोकार्पण करने से पूर्वे ही पूल तूट कर नीचे गिर पडता है। तो राज्य की यें जीम्मेवारी बनती है कि जीसे भी सडक या पूल बनाने की जीम्मेवारी दें, उस पर अपनी तपास कमिटी के द्वारा उसकी शुद्धता और मजबूती की खराई करे बाद मे प्रजा के लिए उपभोग्य बनाये।

राजा और राजकृतः

वैदिक संहिताओं और ब्राह्मणग्रन्थों में राजा के निर्वाचन या राजकार्य में सहायकों राजकृत कहा जाता है। शतपथ ब्राह्मण (13,5, 3-1) में उल्लेखित है कि अधिकारी ही रत्नी के नाम से प्रख्यात थे, जो राजकृत के प्रतिनिधि थे और अभिषेक से पूर्व राजा जिनके पास जाता था वै है- सेनानी (सेनापति), पुरोहित, अभिषेचनीय, राजा, महिषी (महाराणी), सूत (इतिहास लेखक), ग्रामीण (वैश्य), संग्रहीत (कोषाध्यक्ष), अक्षावाप (आय-व्यय निरीक्षक),भागदुह (कर लेनेवाला),गोविकर्तृ (अरण्यपाल), पालागल (विशिष्ट सन्देश वाहक) का वर्णन ऋग्वेद (10,62,11) और (10,107) में आता है।

वेदों में मन्त्रिमण्डल के लिए 'समिति' शब्द का प्रयोग है। आचार्य कौटिल्य ने इसके लिए 'मंन्त्रिपरिषद' शब्द का प्रयोग किया है और उसने मन्त्रियों की संख्या 12 बतायी है।-

मंत्रिपरिषद द्वादशामात्यां कुर्वीत।[10]

इन्हे दों भागों में बाटा गया है।

(क) राजानो राजकृत (राजपरिवार से संबद्ध)

(ख) अराजानो राजकृत (राजपरिवार से असंबद्ध)

इनमें पुरोहित ब्राह्मण वर्ण का, राजन्य क्षत्रिय वर्ण का, महिषी स्त्री वर्ग का, ग्रामीण वैश्य वर्ग का,पालागल शुद्र वर्ग का, सेनानी सैनिकों का, संग्रहीता और भागदुह व्यापारियों का, अक्षावाप वित्तभाग का, गोविकर्तृ भूसंरक्षकों का, तक्षा शिल्पियों का प्रतिनिधित्व करते था।

मंत्रि मण्डल में सदस्यों की संख्या के विषय में महाभारत, कौटिलीय अर्थशास्त्र, मनुस्मृति और शुक्रनीति आदि में विस्तृत वर्णन उपलब्ध है।

आज के मंत्र् मण्डल में कार्य की योग्यता, कुशलता या कुलीनता देंख के कार्यभार नहीं सोंपा जाता, परंतु मामकाः वृत्ति से अपने अपने फायदें देंख के मंत्रि पद पे नियुक्ति होती है। नियुक्त मंत्री अपने कार्यों में अज्ञात होने के कारण कई समस्याओं का सामना जनता को करना पडता है।

सभा और समितिः

अथर्ववेद में सभा और समिति को प्रजापति की दो पुत्रियाँ कहा गया है। इसका अभिप्राय यह है कि राजा ही इन दोनों की स्थापना करता है। दोनों ही लोकहित और नृपहित का कार्य सम्पादन करती थी, दोनों के स्वरूप में अन्तर था।

सभा का स्वरूपः

सभा छोटी इकाई है, परंतु इस का स्वरूप व्यापक है। यह ग्राम सभा से लेकर केन्द्रीय सभा तक होती है।

साभा के सदस्यों के सभ्य, सभेय और सभासद कहते थे। अध्यक्ष के लिए 'सभापति' शब्द का प्रयोग है। सभा में अपने विचार व्यक्त करने की स्वतंत्रता थी। -

ते मे सन्तु सवाचसः।[11]

आज सभा में बोलने का या अपने मत रखने का अवसर सब को नहीं मिलता, क्योंकी सब की अवाज को सूनने की वजह दबा दी जाती है।

सभा का कार्यः

सभा का मुख्य कार्य़ था न्याय की समुचित व्यवस्था करना। विवाद ग्रस्त विषयों का निस्तारण करना और उन पर अपना अन्तिम निर्णय देना। सभा के निर्णय का कोई उल्लंधन नहीं कर सक्ता था। इससे ज्ञात होता है कि न्याय के मामले में सभा सर्वोच्च संस्था थी।

समिति का स्वरूपः

समिति राष्ट्रीय स्तर की महासत्ता थी। इस में राष्ट्र के सभी वर्गो का प्रतिन्धित्व होता था और सार्वजनिक जीवन से सम्बद्ध सभी महत्त्वपूर्ण विषयों पर चर्चा होती थी। इसका कार्यक्षेत्र न्याय विधान तक ही सीमीत न होकर समस्त राष्ट्र की सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक आदि व्यवस्थाओं से सम्बद्ध था। सभी समस्याओं को हल करना और उन पर अपना निर्णय देना समिति का कार्य था।

समिति का कार्योः

वेदों के अनुसार समिति का कुछ प्रमुख कार्य इस प्रकार है।-

(1) राजा का निर्वाचन करना

(2) उसके कर्तव्यों का निर्धारण करना

(3) कर्तव्य निर्वाह न करने पर उसे पदच्युत करना और राज्य से निर्वासित करना -

मा त्वद् राष्ट्रमधिभ्रशत्।[12]

(4) प्रायश्चित आदि करने पर राजा को पुनः गद्दी पर बैठाना।

(5) राष्ट्रीय आय- व्यय और जनता का योग क्षेम के लिए राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था पर नियंत्रण रखना। - योगक्षेमं वं आदाय।[13]

(6) राज्य में अन्याय, अत्याचार, अराजकता को रोकना समिति का कार्य था।

(7) समिति की अध्यक्षता राजा करता था, अत- समिति में राजा की उपस्थिति अनिवार्य होती थी।

वर्तमान में विधानसभा और लोकसभा का स्वरूप सभा और समिति का है। परन्तु वर्तमान में कार्य का साम्य नही मिलता।

वैदिक कालिन राजनीतिक स्थिति को वर्तमान के परिप्रेक्ष्य में देखा जाये तो - भारत की आधुनिक राजनीतिक व्यवस्था परम्परावादी की अपेक्षा आधुनिक ज्यादा है। (1) पूर्व ब्रिटिश भारत, (2) ब्रिटिश कालिन भारत, (3) स्वतंत्र भारत - इन तीन कालों में भारतीय समाज और राजनीतिक तंत्र की अपनी विशेषताएँ रही है।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात गणतंत्रीय शासन व्यवस्था की स्थापना हुई - जिसमें जनसम्प्रभुता के सिद्धान्त को मान्यता दी गयी। सार्वभौमिक मताधिकार के सिद्धान्त को अपनाकर जनसाधारण को राजनीति में भाग लेने के लिए आमंत्रित किया गया। संविधानने सामाजिक और राजनीतिक समानता को मान्यता दी। अस्पृश्यता को अवैधानिक घोषित किया गया । इस शासन का स्वीकार करते हुए सभी व्यक्तियों के लिए एक कानून और एक न्याय प्रणाली की व्यवस्था की गयी है। संविधान ने नागरिकों को विभिन्न प्रकार की स्वतंत्रताएँ प्रदान की, जिनमें संध और समुदाय बनाने की स्वतंत्र भी शामिल है। इस अधिकार के अनुसार अनेक राजनीतिक संगठनों का निर्माण हुआ, जिन्होने जनसाधारण के द्वारा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित होती है। परिणाम स्वरूप सामान्य जन भी जनतंत्रीय प्रक्रिया से परिचित होकर और पंचायती चुँनाव में भाग लेकर ग्रामीण राजनीति में प्रवेश करने लगे। धीरे धीरे यही लोग ऊपर की राजनीतिक संस्थाओं में दाखिल हुए।

स्वतंत्रता के बाद आर्थिक क्षेत्र में भी कुछ मौलिक परिवर्तन हुए। औद्योगिकरण और शहरीकरण के अतिरिक्त आर्थिक समानता लाने के आदर्श को अपनाया गया तथा सामन्तवाद का अन्त किया गया। स्वयं संविधान की प्रस्तावना में सामाजिक - आर्थिक न्याय स्थापित करने की घोषणा की गयी।

इस प्रकार वेदकालिन राष्ट्र की राजनीतिक स्थिति के सामने वर्तमान राजनीतिक स्थिति के बारे में कह सकते है कि विकासशील देशों में अग्रणी उत्तरोत्तर विकास पथ पर अग्रसर विश्व के सबसे बडे गणराज्य भारतवर्ष का राजनीतिक परिदृश्य अत्यन्त गौरवपूर्ण है, जो कि परम्परागत आदर्शों के साथ सामजस्य स्थापित करते हुए आधुनिक राजनीतिक चिंतन के परिप्रेक्ष्य में अपने संविधान के सहारे जनमानस की सुख - समृद्धि के लिए प्रयत्नशील हौ। यदि हम चाहते है कि राजनीतिक आधुनिकीकरण के चरमोत्कर्ष को प्राप्त कर सके, तो तप और त्याग का सहारा लेना पडेगा। राजा का सुख प्रजा के सुख में निहित है।यह तभी संभव है की वेदों में वर्णित कर्तव्य परायणता का आश्रय लेकर राजा और प्रजा ईमानदारी से अपने कर्तव्यों का निर्वाह करे । परिणाम स्वरूप देश चारो ओर से सुरक्षित होगा और सभी प्रकार की सुख समृद्धियों से युक्त होगा।

संदर्भ – ग्रन्थ सूचि

I. (अथर्व. 19-41-1)
II. (अथर्व. 3-5-7)
III. (अथर्व. 3-4-2)
IV. (ऐ.ब्रा. 8,3,15)
V. (शत. ब्रा. 5,2.1,1,25)
VI. (अथ. 7-35-1)
VII. (यजु. 39-9)
VIII. (यजु. 11-15)
IX. (ऋ. 7-6-5)
X. (अर्थशास्त्र पृ. 57)
XI. (अर्थववेद 7-12-2)
XII. ऋ. 10,2,7-1
XIII. (ऋ. 10-166-5)

संदर्भ ग्रन्थ सूचि

I. ऋग्वेद संहिता - दिल्ली संस्कृत साहित्य अकादमी,
II. यदुर्वेद संहिता - दिल्ली संस्कृत साहित्य अकादमी,
III. अथर्ववेद संहिता - दिल्ली संस्कृत साहित्य अकादमी,
IV. कौटिल्य अर्थशास्त्र - संपादक गौतम पतेल
V. ऋग्वेद भाष्य - स्वामि दयनन्द सरस्वती

VI. शतपथ ब्राह्मण,

VII. शुक्रनीति - सरस्वती प्रकाशन

****

Dr. Manjula J. Viradiya
Associate Professor
Head, Department of Sanskrit
Smt. A. P. Patel Arts &
Late Shree N. P. Patel Comm. College
Ahmedabad

Copyright © 2012 – 2018 KCG. All Rights Reserved. | Powered By: Knowledge Consortium of Gujarat